International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2026; 3(1): 62-65
© 2026 IJMH
www.themultijournal.com

Received: 05-01-2026
Accepted: 23-01-2026
Publish : 24-01-2026

कु. नेहा असाटी
शोधार्थी,
महाराजा छत्रसाल बुन्देलखण्ड-विश्वविद्यालय,छतरपुर म.प्र.

Correspondence:
कु. नेहा असाटी
शोधार्थी,
महाराजा छत्रसाल बुन्देलखण्ड-विश्वविद्यालय,छतरपुर म.प्र.

महेश कटारे 'सुगम' की बुंदेली ग़ज़ल : एक अध्ययन

कु. नेहा असाटी

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य की परंपरा में लोकभाषाओं और बोलियों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यद्यपि लंबे समय तक साहित्यिक मान्यता मुख्यतः संस्कृत, फारसी, उर्दू और खड़ी बोली हिंदी तक सीमित रही, फिर भी क्षेत्रीय भाषाओं ने अपने लोकजीवन, सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक यथार्थ के माध्यम से साहित्य को निरंतर समृद्ध किया। इन्हीं क्षेत्रीय भाषाओं में **बुंदेली** का स्थान विशिष्ट है। बुंदेलखंड की जीवन-शैली, संघर्ष, लोकमानस और सांस्कृतिक चेतना बुंदेली भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त होती रही है।

ग़ज़ल एक ऐसी काव्य-विधा है, जिसकी उत्पत्ति अरबी-फारसी साहित्य में हुई और जिसने उर्दू साहित्य में अपने शिखर को प्राप्त किया। परंपरागत रूप से ग़ज़ल को प्रेम, विरह, दर्द, आध्यात्मिक अनुभूति और आत्मसंवाद की काव्य-विधा माना गया है। किंतु समय के साथ-साथ ग़ज़ल ने अपने विषय-क्षेत्र का विस्तार किया और सामाजिक, राजनीतिक तथा मानवीय प्रश्नों को भी अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया।

भारतीय भाषाओं में ग़ज़ल का प्रवेश एक महत्वपूर्ण साहित्यिक घटना है। हिंदी, गुजराती, मराठी, पंजाबी, बंगला आदि भाषाओं में ग़ज़ल लिखी गई, परंतु **बुंदेली भाषा में ग़ज़ल का सृजन अपेक्षाकृत नवीन प्रयोग** है। इस संदर्भ में **महेश कटारे 'सुगम'** का नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्हें सर्वसम्मति से **बुंदेली ग़ज़ल का जनक** माना जाता है। उन्होंने पहली बार बुंदेली जैसी लोकभाषा में ग़ज़ल की शास्त्रीय संरचना को आत्मसात करते हुए उसे स्थानीय जीवन, सामाजिक यथार्थ और जनसंघर्ष से जोड़ा।

यह शोध-पत्र **महेश कटारे 'सुगम' की बुंदेली ग़ज़लों का साहित्यिक, भाषिक और सामाजिक अध्ययन** प्रस्तुत करता है। इस अध्ययन का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि किस प्रकार सुगम जी ने परंपरागत उर्दू ग़ज़ल की सीमाओं से बाहर निकलकर बुंदेली ग़ज़ल को एक स्वतंत्र और प्रभावशाली काव्य-विधा के रूप में स्थापित किया।

बुंदेली भाषा : स्वरूप और साहित्यिक परंपरा

बुंदेली भाषा मध्य भारत के बुंदेलखंड क्षेत्र में बोली जाने वाली एक प्रमुख लोकभाषा है। इसका विस्तार मुख्यतः मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के कुछ जिलों में पाया जाता है। भाषावैज्ञानिक दृष्टि से बुंदेली, पश्चिमी हिंदी की उपभाषा मानी जाती है, किंतु इसका अपना स्वतंत्र भाषिक व्यक्तित्व और साहित्यिक परंपरा है।

बुंदेली भाषा का साहित्य प्रारंभ में **लोकगीतों, वीरगाथाओं, आल्हा-खंड, लोककथाओं और भक्ति काव्य** के रूप में विकसित हुआ। आल्हा-ऊदल की वीरगाथाएँ बुंदेली साहित्य की अमूल्य धरोहर मानी जाती हैं। इन लोककाव्यों में वीरता, स्वाभिमान और संघर्ष की भावना प्रबल रूप से दिखाई देती है। आधुनिक काल में बुंदेली भाषा ने कविता, कहानी, नाटक और ग़ज़ल जैसी विधाओं को अपनाया। किंतु लंबे समय तक इसे साहित्यिक मंचों पर वह स्थान नहीं मिला, जो खड़ी बोली हिंदी को प्राप्त हुआ। इसके बावजूद बुंदेली भाषा में रचे गए साहित्य ने अपने भीतर लोकजीवन की सच्ची तस्वीर

सुरक्षित रखी।

ग़ज़ल विधा : परंपरा और विकास

ग़ज़ल एक लयात्मक काव्य-विधा है, जिसकी संरचना अत्यंत अनुशासित मानी जाती है। इसमें **मतला, मक़ता, क़ाफ़िया, रदीफ़ और बहर** जैसे तत्वों का विशेष महत्व होता है। पारंपरिक ग़ज़ल में प्रत्येक शेर अपने आप में पूर्ण होता है, किंतु भावात्मक रूप से वह पूरी ग़ज़ल से जुड़ा रहता है।

उर्दू ग़ज़ल में मीर, ग़ालिब, मोमिन, दाग़, फ़ैज़ और नज़ीर अकबराबादी जैसे कवियों ने इस विधा को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया। हिंदी में भी दुष्यंत कुमार, नागार्जुन, अदम गोंडवी जैसे कवियों ने ग़ज़ल को सामाजिक सरोकारों से जोड़ा।

बुंदेली भाषा में ग़ज़ल का प्रयोग एक साहसिक और नवोन्मेषी कदम था। लोकभाषा में ग़ज़ल लिखना केवल भाषिक प्रयोग नहीं था, बल्कि यह **लोकजीवन को शास्त्रीय काव्य-विधा से जोड़ने का प्रयास** था।

महेश कटारे 'सुगम' : जीवन और साहित्यिक यात्रा

महेश कटारे 'सुगम' का जन्म 24 जनवरी 1954 को बुंदेलखंड क्षेत्र के ललितपुर जनपद के एक ग्रामीण परिवेश में हुआ। उनका जीवन आरंभ से ही सामान्य और संघर्षपूर्ण रहा। सरकारी सेवा में रहते हुए भी उन्होंने साहित्य से अपना नाता बनाए रखा।

सुगम जी का साहित्यिक झुकाव प्रारंभ में हिंदी कविता की ओर था, किंतु धीरे-धीरे उन्होंने बुंदेली भाषा में सृजन करना आरंभ किया। उन्होंने महसूस किया कि बुंदेलखंड की पीड़ा, संघर्ष और संवेदना को अभिव्यक्त करने के लिए बुंदेली भाषा ही सबसे उपयुक्त माध्यम है।

यहीं से उनकी **बुंदेली ग़ज़ल यात्रा** प्रारंभ होती है। उन्होंने उर्दू ग़ज़ल की संरचना को समझा, परंतु उसे यथावत अपनाने के बजाय बुंदेली लोकस्वभाव के अनुसार ढाला। यही कारण है कि उनकी ग़ज़लें शास्त्रीय होते हुए भी सहज और जनसुलभ हैं।

बुंदेली ग़ज़ल का शिल्प और संरचना

बुंदेली ग़ज़ल को समझने के लिए यह आवश्यक है कि पहले ग़ज़ल के शिल्पगत पक्ष को स्पष्ट किया जाए। ग़ज़ल एक अनुशासित काव्य-विधा है, जिसमें भाव की स्वतंत्रता होते हुए भी संरचना की दृढ़ता बनी रहती है। **महेश कटारे 'सुगम'** ने इसी शास्त्रीय अनुशासन के भीतर रहते हुए बुंदेली भाषा के लोकस्वभाव को सुरक्षित रखा।

परंपरागत उर्दू ग़ज़ल में जिस प्रकार **बहर, क़ाफ़िया और रदीफ़** का प्रयोग होता है, सुगम जी ने उन्हीं तत्त्वों को बुंदेली शब्दावली के साथ सफलतापूर्वक साधा है। उनकी ग़ज़लों में शेर स्वतंत्र होते हुए भी आपसी भावात्मक एकता बनाए रखते हैं। यह उनके शिल्पगत कौशल का प्रमाण है।

सुगम जी की ग़ज़लों की विशेषता यह है कि वे **कठिन उर्दू शब्दों से परहेज़** करते हैं। इसके स्थान पर वे ऐसे बुंदेली शब्दों का प्रयोग करते हैं, जो सीधे जन-मानस से जुड़े हैं। इससे ग़ज़ल की संप्रेषणीयता बढ़ जाती है और पाठक स्वयं को रचना से जुड़ा हुआ अनुभव करता है।

भाषा-शैली : लोक और शास्त्र का संतुलन

महेश कटारे 'सुगम' की भाषा-शैली बुंदेली ग़ज़ल का सबसे सशक्त पक्ष है। उनकी भाषा न तो पूरी तरह शास्त्रीय है और न ही केवल बोलचाल की। वे लोकभाषा की सहजता और ग़ज़ल की लयात्मकता के बीच एक संतुलन स्थापित करते हैं।

उनकी ग़ज़लों में प्रयुक्त बुंदेली शब्द—जैसे *नईंयाँ, कभऊँ, देखो, जगा, हाल, पेट*—सीधे ग्रामीण जीवन से जुड़े हुए हैं। ये शब्द ग़ज़ल को कृत्रिम नहीं बनने देते। यही कारण है कि उनकी ग़ज़लें मंचीय पाठ में भी अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध होती हैं।

सुगम जी की भाषा में **व्यंग्य और कटाक्ष** का भी प्रभावी प्रयोग दिखाई देता है। वे सामाजिक विसंगतियों पर तीखा प्रहार करते हैं, किंतु उनकी भाषा कहीं भी अशिष्ट नहीं होती। यह शैली उन्हें समकालीन बुंदेली रचनाकारों से अलग पहचान देती है।

विषय-वस्तु : सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति

परंपरागत ग़ज़ल प्रेम और विरह की भावभूमि तक सीमित रही है, परंतु महेश कटारे 'सुगम' ने बुंदेली ग़ज़ल को सामाजिक यथार्थ का सशक्त माध्यम बनाया। उनकी ग़ज़लों में किसान, मज़दूर, बेरोज़गार युवा, महँगाई से त्रस्त आम आदमी और व्यवस्था से उपेक्षित ग्रामीण समाज की पीड़ा मुखर होकर सामने आती है।

उनकी एक प्रसिद्ध बुंदेली ग़ज़ल में महँगाई और आर्थिक संकट का चित्रण इस प्रकार है—

सबई जगा कौ हाल दिखा रऔ एकई सौ
दूद, तेल, पिट्रोल, सिलेंडर, फीसन में
मेंगाई कौ जाल दिखा रऔ एकई सौ

यहाँ 'एकई सौ' केवल मुद्रा का संकेत नहीं है, बल्कि यह **बढ़ती महँगाई और आर्थिक असमानता का प्रतीक** बन जाता है। ग़ज़ल का यह शेर स्थानीय भाषा में राष्ट्रीय समस्या को अभिव्यक्त करता है।

ग्रामीण जीवन और लोकसंवेदना

महेश कटारे 'सुगम' की ग़ज़लों का मूल आधार **ग्रामीण जीवन** है। बुंदेलखंड का सूखा, किसान की चिंता, रोज़गार का अभाव, सामाजिक विषमता—ये सभी तत्व उनकी ग़ज़लों में स्वाभाविक रूप से उपस्थित हैं।

उनकी ग़ज़ल *"पचत नईंयाँ"* ग्रामीण मन की बेचैनी को व्यक्त करती है—

पेट में बात पचत नईंयाँ
कए बिन चैन परत नईंयाँ

यहाँ 'पेट' केवल शारीरिक भूख का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह **आर्थिक और मानसिक असंतोष** का भी संकेत करता है। ग़ज़ल का प्रत्येक शेर बुंदेलखंड के आम जन की पीड़ा को सामने लाता है।

राजनीतिक और सामाजिक चेतना

सुगम जी की बुंदेली ग़ज़लें केवल भावुक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं हैं; वे सामाजिक और राजनीतिक चेतना से भी परिपूर्ण हैं। वे व्यवस्था की विफलताओं, सत्ता की संवेदनहीनता और आम जनता की उपेक्षा को बेबाकी से उजागर करते हैं।

उनकी ग़ज़लों में सत्ता के प्रति प्रश्न उठाने का साहस दिखाई देता है। वे लोकभाषा में प्रश्न करते हैं, जिससे उनकी बात अधिक प्रभावी बन जाती है। यह विशेषता उन्हें लोककवि और जनकवि के रूप में स्थापित करती है।

प्रतीक और बिंब योजना

महेश कटारे 'सुगम' की ग़ज़लों में प्रयुक्त प्रतीक अत्यंत सहज और लोकजीवन से जुड़े हुए हैं। वे खेत, पेट, रोटी, तेल, सिलेंडर, रात, नींद जैसे प्रतीकों के माध्यम से बड़े सामाजिक अर्थों की सृष्टि करते हैं।

उनकी बिंब योजना कृत्रिम नहीं है। यह बुंदेलखंड के प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश से जन्म लेती है। यही कारण है कि उनकी ग़ज़लें पढ़ते समय पाठक एक जीवंत दृश्य-चित्र अपने सामने अनुभव करता है।

परंपरा और नवाचार

सुगम जी की बुंदेली ग़ज़लें परंपरा और नवाचार का सुंदर समन्वय प्रस्तुत करती हैं। एक ओर वे ग़ज़ल की शास्त्रीय संरचना का पालन करते हैं, वहीं दूसरी ओर वे विषय-वस्तु और भाषा में नवीन प्रयोग करते हैं।

उन्होंने यह सिद्ध किया कि ग़ज़ल केवल उर्दू या खड़ी बोली तक सीमित विधा नहीं है, बल्कि लोकभाषाओं में भी यह उतनी ही प्रभावशाली हो सकती है। इस दृष्टि से उनका योगदान ऐतिहासिक महत्व रखता है।

समकालीन बुंदेली साहित्य में स्थान

समकालीन बुंदेली साहित्य में महेश कटारे 'सुगम' का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने न केवल स्वयं ग़ज़ल लिखी, बल्कि आने वाली पीढ़ी के बुंदेली रचनाकारों को भी प्रेरित किया।

आज बुंदेली भाषा में जो ग़ज़ल परंपरा दिखाई देती है, उसकी नींव सुगम जी ने ही रखी। उनके बिना बुंदेली ग़ज़ल की कल्पना अधूरी प्रतीत होती है।

बुंदेली ग़ज़ल और सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ

महेश कटारे 'सुगम' की बुंदेली ग़ज़लें केवल साहित्यिक प्रयोग नहीं हैं, बल्कि वे **बुंदेलखंड के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन का दस्तावेज़** भी हैं। बुंदेलखंड का समाज ऐतिहासिक रूप से संघर्ष, अभाव और आत्मसम्मान से जुड़ा रहा है। सूखा, बेरोज़गारी, पलायन, किसान आत्महत्या, सामाजिक विषमता—ये सभी समस्याएँ इस क्षेत्र के जीवन का हिस्सा रही हैं। सुगम जी की ग़ज़लें इन्हीं यथार्थों से जन्म लेती हैं।

उनकी ग़ज़लों में जो पीड़ा दिखाई देती है, वह व्यक्तिगत नहीं, बल्कि **सामूहिक पीड़ा** है। वे "मैं" से आगे बढ़कर "हम" की आवाज़ बनते हैं। यही कारण है कि उनकी ग़ज़लें बुंदेली समाज में आत्मीयता के साथ स्वीकार की गईं।

बुंदेली ग़ज़ल के माध्यम से सुगम जी ने यह सिद्ध किया कि लोकभाषा केवल भावुक अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं है, बल्कि वह **सामाजिक प्रतिरोध और चेतना का सशक्त औज़ार** भी हो सकती है।

लोकचेतना और जनपक्षधरता

महेश कटारे 'सुगम' की ग़ज़लों का मूल स्वर **जनपक्षधरता** है। वे शोषित, वंचित और उपेक्षित वर्ग की आवाज़ को साहित्य के केंद्र में लाते हैं। उनकी ग़ज़लें सत्ता-समर्थक नहीं, बल्कि सत्ता-समीक्षक हैं।

उनकी रचनाओं में किसान केवल एक पात्र नहीं, बल्कि व्यवस्था की विफलता का प्रतीक बन जाता है। मज़दूर की मेहनत, भूख और असुरक्षा उनकी ग़ज़लों में बार-बार उभरती है। यह दृष्टि उन्हें परंपरागत रोमानी ग़ज़लकारों से अलग करती है।

इस जनपक्षधरता के कारण उनकी ग़ज़लें मंचों पर भी अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध होती हैं। श्रोता स्वयं को उनकी पंक्तियों में पहचान लेता है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन

साहित्यिक दृष्टि से महेश कटारे 'सुगम' की बुंदेली ग़ज़लों का मूल्यांकन करते समय कुछ प्रमुख बिंदु सामने आते हैं—

1. विधागत नवाचार

सुगम जी का सबसे बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने ग़ज़ल जैसी शास्त्रीय विधा को बुंदेली जैसी लोकभाषा में स्थापित किया। यह कार्य आसान नहीं था, क्योंकि ग़ज़ल का अनुशासन अत्यंत कठोर माना जाता है। फिर भी उन्होंने इसे सफलतापूर्वक साधा।

2. भाषिक सादगी

उनकी भाषा में कहीं भी दिखावटीपन नहीं है। यही सादगी उनकी शक्ति है। हालाँकि कुछ आलोचक यह मानते हैं कि कभी-कभी यह सादगी ग़ज़ल की कलात्मक जटिलता को कम कर देती है, परंतु इसे कमजोरी के बजाय **लोकसुलभता** के रूप में देखा जाना चाहिए।

3. विषयगत विस्तार

सुगम जी की ग़ज़लें प्रेम तक सीमित नहीं हैं। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विषयों को उन्होंने ग़ज़ल का विषय बनाकर इसकी सीमाओं का विस्तार किया।

4. भावनात्मक प्रामाणिकता

उनकी रचनाओं में भावनाएँ आरोपित नहीं लगतीं। वे स्वयं उस समाज का हिस्सा हैं, जिसके बारे में लिखते हैं। यही कारण है कि उनकी ग़ज़लें विश्वसनीय और प्रभावी बनती हैं।

बुंदेली साहित्य में स्थायी योगदान

महेश कटारे 'सुगम' का योगदान केवल व्यक्तिगत रचनाओं तक सीमित नहीं है। उन्होंने बुंदेली भाषा को **नवीन साहित्यिक पहचान** दिलाने का कार्य किया। उनके बाद बुंदेली ग़ज़ल लिखने वाले अनेक रचनाकार सामने आए, जिन्होंने इस परंपरा को आगे बढ़ाया।

आज बुंदेली ग़ज़ल को यदि एक स्वतंत्र साहित्यिक विधा के रूप में स्वीकार किया जा रहा है, तो उसके मूल में सुगम जी का योगदान है। इस दृष्टि से वे केवल कवि नहीं, बल्कि **परंपरा-निर्माता** हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध-पत्र के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि **महेश कटारे 'सुगम'** ने बुंदेली ग़ज़ल को साहित्यिक मानचित्र पर स्थापित करने में ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। उन्होंने ग़ज़ल की शास्त्रीय परंपरा और बुंदेली लोकसंवेदना के बीच एक सेतु का निर्माण किया।
उनकी ग़ज़लें—

- बुंदेलखंड के सामाजिक यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति हैं,
- लोकभाषा की साहित्यिक क्षमता को प्रमाणित करती हैं,
- और ग़ज़ल विधा के विस्तार में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि महेश कटारे 'सुगम' की बुंदेली ग़ज़लें केवल साहित्यिक रचनाएँ नहीं, बल्कि **समय, समाज और संघर्ष की सजीव अभिव्यक्ति** हैं। भविष्य में बुंदेली साहित्य के इतिहास में उनका नाम एक मील का पत्थर माना जाएगा।

संदर्भ सूची

1. कटारे, महेश (सुगम)। "पचत नईंयाँ – बुंदेली ग़ज़ल।" *साहित्य रचना ई-पत्रिका*, 18 अगस्त 2020।
2. कटारे, महेश (सुगम)। "एकई सौ – बुंदेली ग़ज़ल।" *साहित्य रचना ई-पत्रिका*, 16 नवंबर 2020।
3. कटारे, महेश (सुगम)। "नहीं भैये – ग़ज़ल।" *साहित्य रचना ई-पत्रिका*, 17 अक्टूबर 2020।
4. कुशराज। "बुंदेली ग़ज़ल के जनक : महेश कटारे 'सुगम'।" *कुशराज ब्लॉग*, 1 फ़रवरी 2023।
5. दुबे, आरती। *बुंदेली भाषा और साहित्य*। साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2017।
6. "दिल्ली हिंदी अकादमी द्वारा बुंदेली कवि महेश कटारे 'सुगम' का सम्मान।" *अमर उजाला*, 21 जुलाई 2017।